

हर रोज 'कूपरेज' चौराहे के सिगनल पर उस कृशकाय, मृतप्राय, दीन-हीन, घोर दुर्बल वृद्ध को देखता हूँ। आँखों पर डोरी से बंधे लटकते चश्मे का फ्रेम, जिसके काँच चनके हुए हैं। कमर कमान सी झुकी हुयी, एक हाथ में लाठी और दूसरे में अखबार। आते-जाते सभी गाड़ियों के शीशे खुलने के इंतज़ार में। हाथों में 'मिड डे' का गट्टर बमुश्किल थामे, सभी आगंतुकों की ओर उम्मीद से देखता हुआ कि कोई उसका अखबार खरीद ले।

काँपती दुर्बल काया, 80-85 वर्ष का बूढ़ा आज भी आजीविका के लिए श्रमरत। हाय ! कैसा दुर्भाग्य ? मन में हजारों प्रश्न कौंध जाते हैं ? क्या इसका कोई भी सहारा नहीं है ? क्या इसके बच्चों ने इसे बोझ समझकर इसे छोड़ दिया है, इसके हाल पर ? पीछे का सच कुछ भी हो सकता है, परन्तु सामने नंगा सच यही है कि विश्राम करने की उम्र में यह बूढ़ा अपने जीविकोपार्जन के साधन का असफल प्रयास कर रहा है।

कई बार मैंने सोचा, उसके सारे अखबार खरीद लूँ, किन्तु ऐसा कभी नहीं हो पाया। एक दिन संयोग से मेरी गाड़ी सिगनल पर रुकी और वह मेरे सामने खड़ा था। मैंने सौ रुपये का नोट दिया और कहा कि मुझे सारे अखबार दे दो। मुझे उसने मराठी में कुछ कहा जिसका



कूपरेज चौराहे का बूढ़ा

अर्थ था, मुझे दया की भीख नहीं चाहिये। मैं भिखारी नहीं हूँ। मेरे पास छुट्टे नहीं थे और मैं उसका अखबार नहीं खरीद पाया। आज फिर से बहुत दिनों के बाद कूपरेज चौराहे के उसी सिगनल पर खड़ा हूँ। अचानक किसी कमी का एहसास होता है। दिमाग में बिजली सी कौंधती है। अरे हाँ ! वह बूढ़ा अखबार बेचने वाला नहीं दिख रहा है। बिना

किसी प्रमाण के मन यह मान लेने को मजबूर है कि अब वह नहीं रहा। मन में एक खालीपन का एहसास होता है और मन अपराध बोध से ग्रसित हो जाता है।

मैं उसके लिए कुछ नहीं कर पाया। मेरा हाथ अनायास ही मेरी जेब की ओर बढ़ता है और रुक जाता है। शायद कम से कम मैं एक दिन के लिए कुछ तो कर ही सकता था और उसके संघर्ष को एक पल के लिए कुछ कम तो कर ही सकता था। मेरे एक दिन के लिए उसके सारे अखबार खरीदने से उसका क्या भला होता, यह पता नहीं, लेकिन कुछ पल के लिए ही सही, उसके चेहरे पर संतुष्टि और मुस्कान देखने के लिए मेरा मन व्याकुल था। जब हट्टे-कट्टे लोगों को भीख मांगते देखता हूँ, तो उसी बूढ़े का स्मरण हो आता है, जिसने मुझे श्रम की गरिमा को समझाया, जिसने आसानी से बिना श्रम किये पाये जाने वाले धन को ठोकर मार दी। अपनी निश्चेष्ट प्रकृति पर आज भी मैं उद्वेलित और क्रोधित रहता हूँ और छटपटाता हूँ, जब भी 'कूपरेज' के इस सिगनल पर मेरी गाड़ी रुकती है। लगता है जैसे उसका प्रतिबिम्ब आज भी अखबार बेच रहा है और मैं सर झुकाये आँखों को ऊपर करने का साहस नहीं जुटा पाता।

 संतोष कुमार झा

उप मुख्य परिचालन प्रबंधक (योजना), चर्चगेट



100 रुपये का नोट

यह एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जो बिना सोचे-समझे, एक बालक पर आरोप लगाता है और बाद में अपनी भूल का एहसास होने पर पश्चाताप की आग में जलता है।

पात्र-परिचय

रामनाथ-एक सरकारी नौकर

लता-रामनाथ की पत्नी

रामू-नौकर (उम्र 14 साल)

धोबिन-कपड़े धोने वाली

दृश्य-1 (परदा खुलता है। शाम का समय/कमरे में रामनाथ का प्रवेश/रामनाथ जेब से पर्स निकालकर पलंग पर रखता है और एक चीज वह तकिये के कवर में डाल देता है।)

दृश्य-2 (सुबह 10 बजे, रामनाथ ऑफिस जाने की तैयारी में) रामनाथ-अजी सुनती हो? लता-क्या है जी? रामनाथ-तुमने मेरे पर्स से 100 रुपये तो नहीं निकाले ? कल ही रखे थे। लता- तुम ही चीजें इधर-उधर रख कर भूल जाते हो। मैंने कोई रुपये नहीं निकाले। रामनाथ -

अच्छा (एक लम्बी साँस भरकर) फिर कौन हो सकता है ? हम दोनों के अलावा इस घर में और कौन है ? लता - मैं क्या जानूँ ? (तभी रामू का प्रवेश) रामनाथ - अरे रामू। रामू- जी मालिक। रामनाथ - (दाँत-होंठ चबाकर) जी मालिक के बच्चे ! ये बता, तूने कहीं मेरे पर्स से 100 रुपये का नोट तो नहीं निकाला ? रामू - नहीं मालिक। रामनाथ - मैं कहता हूँ, सीधी तरह मान जा, वरना तुझे पुलिस में दे दूंगा। लता - अजी सुनिये तो। रामू - सच कहता हूँ मालिक, मैंने रुपये नहीं चुराये। मैं चोर नहीं हूँ। रामनाथ - तू ऐसे नहीं मानेगा। ठहर, तुझे अभी ठीक करता हूँ (रामू को मारने दौड़ता है।) लता - अजी मैं कहती हूँ... रामनाथ-तुम चुप रहो जी। रामू - मैं सच कहता हूँ मालिक, मैंने 100 रुपये का नोट नहीं चुराया है। मैं चोर नहीं हूँ। (रामनाथ मारने के लिए दौड़ता है और रामू बचने के लिए भागता है।)

दृश्य-3 (रामनाथ का तबादला कानपुर हो गया है। नये घर में लता कमरा ठीक कर रही है। तभी धोबिन का प्रवेश) धोबिन - राम-राम मालकिन। लता - हाँ। राम-राम। धोबिन - मालकिन, कल जो आपने कपड़े धोने के लिए

दिये थे (तभी रामनाथ का प्रवेश) उसमें तकिये के कवर में से ये 100 रुपये का नोट मिला। आपका ही है। कहीं मुझे चेक तो नहीं कर रही थी। (लता रामनाथ की ओर देखती है। रामनाथ नज़रें चुराने की कोशिश करता है।) लता - नहीं वो, भला मैं तुझे क्यों चेक करूँगी? यह तो गलती से चला गया होगा। लता फिर रामनाथ की ओर देखती है। रामनाथ शर्मिदा होकर नज़रें झुका लेता है। धोबिन कपड़े रखकर चली जाती है। लता - अब कहो। क्या कहते हो ? उस दिन मैं कहती रह गयी, पर तुमने मेरी एक न सुनी। 100 रुपये के नोट के पीछे तुमने छोटे बालक रामू को मार-मारकर उसका बुरा हाल कर दिया। रामनाथ - अब बस करो लता। मेरी भूल हुई, जो मैंने रामू पर आरोप लगाया। मेरे कानों में रामू के वही शब्द गूँज रहे हैं 'मालिक, मैंने 100 रुपये का नोट नहीं चुराया। मैं चोर नहीं हूँ।' काश! रामू मुझे माफ कर देता।

(नेपथ्य से रामू की आवाज़) मालिक आपने सच्चे मन से पश्चाताप किया है। जाओ, मैं आपको माफ करता हूँ। (परदा गिरता है।)

 डी. जी. मिश्रा, उप मुख्य यातायात निरीक्षक, मुंबई सेंट्रल